अथ

श्रीमत्प्रणवकविप्रणीता

अन्योक्तिरत्नावली

प्रणेता

डॉ0 इच्छाराम द्विवेदी "प्रणवः"

आचार्योऽध्यक्षश्च

पुराणेतिहास-विभागे

श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत

विद्यापीठम्

कटवारिया सराय, नव देहली-110016

अन्योक्तिरत्नावली

हंसः

विद्यापयोधिचलदूर्मिसुपूजिताय
वागीश्वरीपदपरागसुसज्जिताय
सच्छास्त्रदुग्धपरिपीतलसन्मुखाय
हंसोत्तमाय भवते मम वन्दनानि।१।।

भावार्थ

विद्यारूपी समुद्र की चञ्चल लहरों से पूजित, माँ सरस्वती के पदपंकजपराग से भलीभाँति अलंकृत, सत् शास्त्र रूपी दुग्ध का पान करने से सुन्दर मुख वाले हे उत्तम सारस्वत हंस! आपको मेरा प्रणाम है।

त्रिभङ्गी

स्तब्धा मायाकुरङ्गी विधिहरहरिणी वीक्ष्य यस्याः स्वरूपं
भग्नो यस्याः कटाक्षैस्त्रिभुवनविजयी कोऽपिकन्दर्पदर्पः
चञ्चद्विद्युल्लताभिर्घन इव खचिता बल्लवीबाहुपाशे
रासोल्लासप्रसन्ना जगति मुररिपोः सा त्रिभङ्गी पुनातु।।

भावार्थ

जिस के सुन्दर स्वरूप को देखकर ब्रह्मा एवं शिव जी के चित्त को भी हरण करने वाली मायारूपी हरिणी मानों स्तब्ध हो जाती है, जिसके तीक्ष्ण कटाक्षों से त्रिभुवनविजयी कामदेव का भी दर्प चूर–चूर हो जाता है, चमकती हुई विद्युत् लता की भाँति गोपियों के बाहुपाश में बँधी हुई रास के उल्लास से प्रसन्न मुरारी श्री कृष्ण की वह त्रिभङ्गी मुद्रा हमें पवित्र करे।

कौटिल्यम्

यस्याङ्के गाङ्गधारा प्रपतनसरणौ नैव मार्गं प्रपेदे
लब्धुं पीयूषमिन्दोश्चपलरसनया सर्पमालेव संस्थम्
नेत्राग्न्युद्भ्रान्तचित्तैरतिरभसतया येन कण्ठं धृतं तत्–
कौटिल्यं कुन्तलानां कलयतु कुशलं चन्द्रमौलेः सदा नः।।

भावार्थ

जिसके अंकपाश में गंगा की धारा गिरने के बाद अपना मार्ग तक नहीं ढूँढ सकी, जो चन्द्रमा का अमृत पीने के लिये अपनी चपल जिह्वाओं से मानो सर्पों की माला जैसी हो गई और जो वह्निज्वाला से व्याकुल चित्त होकर मानो घबराहट में शिवजी का कण्ठ पकड़ कर ही बैठ गई है ऐसी भगवान् चन्द्रमौलि शिव के केशपाश की कुटिलता हमारी सदैव कुशल करे।

विद्युत्

सान्निध्ये ते वयमनुदिनं भोगलीना: सुखेन
लुप्तायान्त्यहह! विकला: श्रीविहीना भवाम:।
गाढाश्लेषे तव च कठिने प्राणशङ्कैव नूनं
हे विद्युत्! ते चपलचरितं को नु विज्ञातुमर्ह:।।

भावार्थ

तुम्हारे पास रहने पर हम सब प्रतिदिन सुख पूर्वक भोगों में तल्लीन रहते हैं, और तुम्हारे चले जाने पर अहह! कितने व्याकुल और श्रीहीन हो जाते हैं, तुम्हारे कठोर और गाढ़े आलिङ्गन में पड़ते ही प्राणों तक की शंका हो उठती है हे बिजली! तुम्हारे चञ्चल चरित्र को कौन जान सकता है?

दूरदर्शनम्

सन्तत्या सममत्र नैव भवता दृष्टव्यमेवास्म्यहं
एकान्ते सुरतादिसर्वधमं दृश्यं मदीयानने
पार्श्वं मा समुपेहि मित्र! खलु मे दूराद् वरं दर्शनं
गेहस्थं मम दूरदर्शनमिदं ब्रूते सखे! नित्यश:।।

भावार्थ

हे मित्र! मुझे आप लोग कभी भी अपनी सन्तान के साथ बैठ कर नहीं देखें। हाँ! एकान्त में जो भी सम्भोगादि अधम दृश्य

हैं उन्हें मेरे अन्तः पटल पर आप देख सकते हैं, हे मित्रो! मेरे पास मत आओ। मेरा दर्शन तो दूर से ही अच्छा है मेरे घर में रखा दूरदर्शन (टी.वी.) रोज मुझसे यही बात कहता है।

रासभः

आदौ तारविरेभनं प्रतिदिनं भक्त्या प्रजानां पुरः
देहे श्वेतरोऽप्ययं धवलिमा नो मानसे विद्यते
पादाघातपटुत्वमस्ति सुतरां पादद्वयेन त्वयि
नूनं नेतृपदस्य रासभ! सखे! सर्वे गुणाः सन्ति ते।।

भावार्थ

सर्वप्रथम प्रतिदिन आप भक्तिपूर्वक प्रजा के समक्ष ऊँचे स्वर में रेंकते हैं, आपकी देह में यह जो धवलिमा—सफेद रंग है वह आपके मन में नहीं है अर्थात् मन से तो आप काले ही हैं, साथ ही आप अपने चरणद्वय से दुलत्ती मारने में तो अत्यन्त चतुर हैं। हे मित्र! गर्दभ! आप में निश्चय ही नेता बनने के सारे गुण विद्यमान हैं।

हंसाः

श्वेतत्वं खलु दूषितं जलगतैस्तैर्मीनभक्षैर्बकैः
क्रेंकारश्च पराजितोऽवनितलेऽसत्पेचकैः घूत्कृतैः
काका मानसरोवरेऽतिविमले राजाज्ञया संस्थिताः
सम्प्राप्ते विषमे युगे वद सखे! हंसाः क्व गच्छन्त्विमे।।

भावार्थ

इनका श्वेतवर्ण तो जल में निवास करने वाले मछली खाने वाले दुष्ट बगुलों ने दूषित कर दिया, और इनकी सुन्दर क्रेंकार की ध्वनि को पृथ्वी तल पर दुष्ट उल्लुओं ने घू घू करके परास्त कर दिया। आजकल राजा के शासनादेश से कौए विमल मानसरोवर में विराज रहे हैं, अब इस विषम युग में मित्रो! ये हंस कहाँ जायें?

अध्यापकः

गल्पाध्यायविजल्पने पटुतरो विद्याधरो वा न वा
चातुर्यन्त्ववकाशलाभविषयेऽसत्शेमुषी वेतने
वाणी लोककथासु निन्दनपराऽऽलस्यं तथाध्यापने
सर्वज्ञोऽस्ति, विचक्षणोऽस्ति नितरां वन्द्योऽस्ति मे ऽध्यापकः।।

भावार्थ

गप्पों के अध्याय की व्याख्या में परमप्रवीण हैं भले ही अपने विद्याविषयों में हों या न हों, छुट्टी लेने के विषय में परमचतुर हैं, इनकी सुन्दर प्रतिभा वेतन लेने में ही है, लोक कथाओं में प्रायः वाणी निन्दा रस से युक्त हो लगी रहती है और अध्यापन में आलस घेरे रहता है ऐसे मेरे पूज्य अध्यापक जी सर्वज्ञ हैं, विद्वान् हैं, परम पूजनीय हैं।

संविधानम्

काचे मणावपि न भेद इहास्ति देशे
सर्वे खरा नृपतयो भवतः कृपातः
नाम्ना तवैव जनतन्त्रमिदं विरौति
हे संविधान! भवते मम वन्दनानि।

भावार्थ

इस देश में कांच और हीरे में कोई भेद नहीं है, आपकी कृपा से सारे गधे राजा बने बैठे हैं, और आपके नाम पर यह गणतन्त्र रो रहा है हे संविधान! आपको मेरा वन्दन है।

संसद्

स्वातन्त्र्ये समुपागते स्वजनताभूत्यै प्रसूतं सुतं
नामानं खलु संविधानमशिवैः सत्ताशृगालैर्मुहुः।
दृष्ट्वा दुर्गतमेव तस्य दमनाच्चेखिद्यमानाऽनिशं
स्वाङ्के स्वस्य सुतस्य वीक्ष्य मरणं संसद् भृशं रोदिति।।

भावार्थ

स्वतंत्रता प्राप्त होने के बाद अपनी प्रजा के कल्याण के लिये जिस पुत्र को पैदा किया था जिसका नाम संविधान है, दुष्ट सत्ता लोभी सियार बार–बार उस पुत्र की दुर्गति कर रहे हैं. यह देखकर उस पुत्र के दमन से दुःखिनी होकर दिन–रात अपनी ही गोद में पुत्र का (संविधान का) मरण होते देख माँ संसद् बहुत रो रही है।

रेलयात्रा

प्रायः समागच्छति सा विलम्बैः
जनास्तुषाकोष्ठमिवाविशन्ति
सद्भ्यः शिरोवेदनमपर्यन्ती
देशेऽस्ति धन्या खलु रेलयात्रा।।

भावार्थ

वह प्रायशः विलम्ब से आती है और आते ही लोग भूसे की तरह उसकी कोठरी (डिब्बे) में घुस जाते है, सज्जनों के लिये वह सिरदर्द ही पैदा करती है ऐसी मेरे देश की रेलयात्रा धन्य है।

विप्रता

तोषो लोभतले, नयोऽनयतले, धैर्यं परस्त्रीतले,
सत्यं स्वार्थतले विरक्तिरतुले भोगे धरित्रीतले
दानं दैन्यतले, प्रयातमधुना सत्कर्मणा ते स्वयं
जानीषे किमु ते विषादभरिता लुप्ता क्व वा विप्रता?।।

भावार्थ

आपका सन्तोष लोभ के नीचे, नीति अनीति के नीचे, धैर्य पराई स्त्रियों के नीचे, सत्य स्वार्थ के नीचे, वैराग्य असीम भोग के नीचे, दान दीनता के नीचे पृथ्वी पर आपके ही सत्कर्मों से जा चुका है अब आप ही बताइये कि दुःख से भरी हुई आपकी विप्रता कहाँ खो गई है? क्या आपको पता है!

भानुः

नित्यं स्वार्थमये भवे कति जना मैत्रीगुणांस्तन्वते
सिद्धे स्वार्थविधौ भवन्ति बहवः सम्बन्धिनो बान्धवाः
ध्वान्तध्वंसविधौ निरन्तरतया लग्नेऽपि भानो! त्वयि
साहाय्यं कुरुते न कोऽपि भवतो राहूपरागक्षणे।।

भावार्थ

इस स्वार्थमय संसार में कितने लोग ऐसे हैं जो मित्रता के गुणों का विस्तार करते हैं? स्वार्थविधिसिद्ध होने पर ही बन्धु बान्धव सम्बन्धी सब हो जाते हैं। हे सूर्यदेव! आप निरन्तर अंधकार के विनाश में लगे ही रहते हैं किन्तु जब आप पर राहु का आक्रमण (ग्रहण के समय) होता है तो कोई सहायता करने नहीं आता।

चन्द्रमा

अनुदिनमिह लोके वर्द्धते शुक्लपक्षे
प्रतिकलमथवायं क्षीयते कृष्णपक्षे
स्वनियतिपरिभोगं दर्शयन्नात्मबिम्बै–
र्नियमयति समस्तान् मानवान् चन्द्रमा वै।।

भावार्थ

संसार में यह प्रतिदिन शुक्ल पक्ष में बढ़ता जाता है और कृष्णपक्ष में एक–एक कला से क्षीण होता जाता है। अपने शरीर से अपनी भाग्य नियति के भोग को दिखलाता हुआ चन्द्रमा

मनुष्यों को मानो नियम बताता है कि यही उत्थान पतन जीवन का क्रम है।

नेतारः

दण्डाघाते प्रचण्डा वितथविवदने संश्रिता यैर्वितण्डा
रण्डाश्लेषेऽस्ति पण्डाऽखिलकलुषयुता पापलीलाप्यखण्डा
भण्डा नित्यं पिचण्डा निजहितनिरताः क्षुद्रमायाकरण्डाः
षण्ढा नेतार एते वद किमपि सुखं दातुमिच्छन्ति बण्डाः।।

भावार्थ

दण्ड का आघात करने में जो प्रचण्ड हैं, मिथ्याविवाद के लिये जो वितण्डा खड़ा करते हैं, जिनकी बुद्धि स्त्रियों के आलिंगन में रत है, सारे पापों से युक्त जिनकी लीला है, जो भण्ड हैं, तुन्दिल हैं मोटी तौंद वाले और स्वार्थ में ही रत हैं ऐसे तुच्छमायाकी पिटारी जैसे पौरुषहीन नेतागण बण्ड (मतवाले) हैं; वे जनता को सुख देने की इच्छा क्या कर सकते है? आप ही बताइये।

आरक्षणम्

सद्वंशे जनिरेव पापमतुलं, शास्त्रे श्रमोऽयोग्यता
वैदुष्यं विपदां पदं प्रतिदिनं देवप्रियाणां गणे
दुर्भिक्षं मरणं भयं नु भविता मे भारते निश्चितं
नेदं रक्षणमस्ति केवलमिदं हाऽऽरक्षणं भक्षणम्।।

भावार्थ

सद् वंश में जन्म लेना ही महान् पाप है, शास्त्र में श्रम करना ही अयोग्यता है, मूर्खों के समूह के बीच अपने विषय की विद्वत्ता ही सबसे बड़ी विपत्ति है। मेरे इस भारत में निश्चय ही दुर्भिक्ष, मरण एवं भय उत्पन्न होगा क्योंकि यह आरक्षण रक्षण नहीं हैं केवल भक्षण ही है।

मूकता

सत्ये नो मुखरायते यदि सखे! धिक्कुर्वते नो मृषां
प्राशस्त्ये प्रखरायते न च गुणे, पापे न बीभत्सति
औचित्ये चपलायते यदि न वा स्वार्थान्धवृत्त्याकुला
मानुष्यं तु खरायते, नरपशोः सा मूकता मूर्खता।।

भावार्थ

हे मित्र! सत्य के लिये जो मुखर नहीं होती और झूठ को जो धिक्कारती नहीं, प्रशस्ति के लिये तथा गुण के लिये प्रखर नहीं होती और पाप से जुगुप्सा नहीं करती, उचित बात कहने को चंचल नहीं होती और सदा स्वार्थवृत्ति से अन्धी और आकुल रहती है उस मनुष्यपशु की मनुष्यता किसी गधे जैसी है और उसकी वह मूकता मूर्खता है।

मा कृथाः

उप्तं कुक्षितले त्वया विषतरोर्बीजं स्वमौर्ख्यादिदं
तस्यैवाद्य फलानि राष्ट्रजनतां कुर्वन्ति मूर्च्छान्विताम्
कर्त्तव्यं खलु कर्तनं द्रुतमिति ज्ञात्वा सखे! भारते
देशे शान्तिविनाशकस्य कुतरोः संसेचनं मा कृथाः।।

भावार्थ

मित्र! तुमने अपनी ही मूर्खता से इस विषवृक्ष का बीज कोख में बो दिया और आज उसी के बिषैले फल राष्ट्र की जनता को मूर्च्छित कर रहे हैं। भारत से इस विषवृक्ष को जल्दी ही काट डालना चाहिये। देश में शान्ति का विनाश करने वाले इस दुष्ट वृक्ष (भ्रष्टाचार) को मत सींचो मत सींचो।

कूप

कुद्दालैर्निशितैः पुनःपुनरपि प्रत्ते व्रणे यत्नतः
बन्धो! दत्तमिदं सुधारसमयं वारि त्वया प्रेमतः
पीत्वा ते सुरसं जना यदि समाशंसन्ति तेनाद्य किं
हे कूप! व्रणितं त्वदीयहृदयं जानन्ति के वस्तुतः?

भावार्थ

हे बन्धु! पैने कुदालों से बार–बार यत्नपूर्वक तुम्हारे घाव किये गये हैं (अर्थात् तुम्हें खोदा गया) फिर भी तुमने बड़े प्रेम से

अमृत जैसा मीठा पानी ही लोगों को दिया। आज लोग यदि तुम्हारे मधुर जल को पीकर तुम्हारी प्रशंसा करते हैं तो क्या हुआ? हे कुऐं! तुम्हारे हृदय के घावों की कथा को कितने लोग जानते हैं?

वापी

गुञ्जद्भृङ्गलसत्सरोजरुचिरं कल्लोलहास्यान्वितं
नीरं निर्मलमाननं नयनयोर्हर्षो यदासीत् पुरा
तद् दृष्ट्वा विरसं निदाघसमये वापि! व्यथां मा कुरु
काले हि प्रतिकूलतामुपगते केनानुभूतं सुखम्?

भावार्थ

गुनगुनाते हुये भँवरे और खिलते हुये कमलों के कारण अतिसुन्दर, लहरों की उन्मुक्त हँसी से समन्वित जल से बना तुम्हारा श्रीमुख जो पहले नेत्रों को आनन्द प्रदान करता था आज ग्रीष्म ऋतु के प्रभाव से वह रसहीन विवर्ण हो गया है पर तुम उसे देख कर दुःखी मत होओ हे वापी (बावड़ी)! समय के प्रतिकूल हो जाने पर जगत् में किसने सुख का अनुभव किया है? किसी ने नहीं।

कोकिला

वर्णे काऽस्ति विशिष्टता क्षितितले रक्ते न वा लक्ष्यते
आकाशे गमनेऽपि नो चतुरता तत्किं विशिष्टं नु ते?
इत्थं काकगणा विवादमनिशं यत्कोकिलैः कुर्वते
वासन्ते समयेऽत्र कूजनविधौ स्यादेव तन्निश्चयः।।

भावार्थ

तुम्हारें रंग में कौन सी विशेषता है? पृथ्वी में तुम्हारे रक्त में भी क्या विशिष्टता है हमें तो नहीं दिखाई देती, आकाश में उड़ने में भी कोई चतुराई नहीं है तो फिर तुममें क्या विशिष्टता है? इस तरह कौए आजकल जो कोयलों से विवाद करते रहते हैं वसन्त का समय आने पर जब कूकने की बारी आयेगी इस विशिष्टता का निर्णय तभी हो सकेगा।

विद्यालयः

शुल्कादानमिषेण शोषणपरः सोपद्रवो नित्यशः,
उद्दण्डोद्भटधृष्टदुष्टपिशुनासच्छात्ररत्नाकरः
घोरालस्यतिमिङ्गला गुरुपदव्रीडाकराः शिक्षकाः
विद्यानां लयकारणं प्रतिदिनं विद्यालयो राजताम्।।

भावार्थ

फीस लेने के बहाने निरन्तर शोषण में रत,नित्य नये उपद्रवों से युक्त, उद्दण्ड उद्भट, धृष्ट दुष्ट चुगलखोर

छात्रों का महासमुद्र,घोर आलसी मगरमच्छ रूपी गुरुशब्द कों लज्जित करने वाले शिक्षकों से समन्वित समस्त विद्याओं का प्रलय स्थान विद्यालय प्रतिदिन सुशोभित हो ।

वानरः

कामक्रोधविमोहलोभकरणे लोकेऽद्वितीयोऽस्ति यो
चापल्येऽप्रतिमःस्वभावकुटिलो यो भूतले वर्तते
भक्त्याऽऽरामनिषेवणं प्रकुरुते नित्यं हनूमानिव
सम्मान्यो भविता सदा स मनुजैः सद्वानरो वा नरः।।

भावार्थ

जो काम क्रोध मोह लोभ करने में संसार में सदैव अद्वितीय है, चंचलता में अप्रतिम है,स्वभावसे ही कुटिल है वही भक्ति सहित हनूमान् जी की तरह यदि श्री राम की सेवा में नित्य निरत हो जाता है तो वह मनुष्यों के लिये सम्माननीय हो जाता है चाहे वानर हो या नर।

पानपात्रम्

नूनं तवैव कृपया मम नैकवारं
शान्ता तृषा विविधपेयरसैः परन्तु
रिक्तीकृतोऽपि न जहासि मदीयपार्श्वं
हे पानपात्र ! भवते मम वन्दनानि।।

भावार्थ

निश्चय ही तुमने अनेक बार कृपा करके विविध प्रकार के पेय रसों से मेरी प्यास को शान्त किया है । मैं बार बार तुम्हें खाली करता रहता हूँ फिर भी तुम मेरा साथ नहीं छोड़ते हे गिलास ! तुम्हें मेरा वन्दन है।

वत्सः

मुक्त्वा त्वां शनकैस्तु दुष्टमनुजा लग्नाः पयोदोहने
शान्ता तेन न ते तृषा न हि पुनर्वात्सल्यतृप्तिर्गवाम्
इत्थं स्वार्थपटुः सदैव भुवने चातुर्यधुर्यो ह्यसौ
लोको लोभमुखं प्रदर्श्य कुरुते हे वत्स ! ते वञ्चनम्।।

भावार्थ

लोग तुम्हें थोड़ी सी देर के लिये खोलते हैं और फिर पकड़ कर गाय दुहने में लग जाते हैं इतनें भर से न तो तुम्हारी प्यास बुझती हैं न ही गौ के वात्सल्य की तृप्ति हो पाती है। यह चतुराई से भरा हुआ संसार स्वार्थ पटु है। यह लोभ का मुख दिखाकर हे बछड़े ! तुम्हें ठगता रहता है।

जम्बीरम्

आरम्भाद्धि कुसंगतिः प्रतिदिनं साकं कृता कंटकैः
तेनैवाद्य कुकर्मणा तव मुखे नूनं प्रवृद्धाम्लता
दुग्धञ्चापि विभिद्यते तव रसैः सिद्धास्ति ते दुष्टता
त्वं जम्बीर ! कराङ्गुलीभिरनिशं निष्पीडनं वाञ्छसि।।

भावार्थ

तुमने तो शुरू से ही कांटों की प्रतिदिन कुसंगति की है। उसी कुकर्म से आज तुम्हारे भीतर खटास बढ़ गई है। तुम्हारे रस से तो दूध भी फट जाता है; तुम्हारी दुष्टता सिद्ध है हे नीबू! तुम जैसों को रोज अंगुलियों से दाब कर निचोड़ा जाना चाहिये।

कदली

रूपं यथा मधुरमस्ति तथैव नित्यं
अन्तस्तलञ्च कदलीफलरूप! बन्धो!
आबालवृद्धवनिताजनरागहेतो!
माधुर्यसारसहित! प्रणमामि तुभ्यम्।।

भावार्थ

हे केले के फल! बन्धु! जैसा तुम्हारा रूप मधुर है ठीक वैसा हीं तुम्हारा हृदय भी मीठा है तुम बालक वृद्ध वनिता सभी के प्रिय हो हे माधुर्यसार से युक्त कदली फल! मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ।

वयम्

पीता मोहमयीसुरा विषमयी, नीता मतिः कर्दमे
गीता न स्तुतिमालिका न च विभोऽधीताऽस्ति विद्या शुभा
विक्रीता सुमतिः विकर्मभवने स्फीता न कीर्तिर्भवे
सीतारामपदाब्जयोर्न हि रतिर्लोकेऽविनीता वयम्।।

भावार्थ

मोहमयी विषमयी सुरा का खूब पान किया, मति को कीचड़ में जा पटका, स्तुति कभी गाई नहीं और हे प्रभु! शुभ विद्या कभी पढ़ी नहीं। सद्बुद्धि को कुकर्मों के घर में बेच आये, संसार में कीर्ति वाले कोई काम नहीं किये सीताराम के चरणारविन्दयुगल में प्रेम भी नहीं किया हम लोग संसार में कितने उद्दण्ड हैं।

मक्षिका

नानापुष्पपरागसारमधुरं हृत्वा श्रमैः भूरिशः
स्वे कोषे निहितन्त्वया मधु सदा सुस्वादु सर्वप्रियम्
क्रूरोऽसौ मधुहा हरिष्यति गृहात्ते वस्तु हे मक्षिके!
त्वं यत्नैर्मधुसंग्रहे प्रतिदिनं व्यर्थोद्यमं मा कुरु।।

भावार्थ

अरी मधुमक्खी! तुमने अनेक पुष्पों के पराग का सार ग्रहण कर बड़े परिश्रम से अपने छत्ते में मीठा स्वादिष्ट लोकप्रिय मधुर शहद इकट्ठा किया परन्तु यह क्रूर कंजड़ तुम्हारे घर से तुम्हारी यह वस्तु हरण कर ले जायेगा इसलिये तुम यत्न पूर्वक रोज रोज मधुसंग्रह के लिये बेकार की मेहनत मत करो।

उपवनम्

सुतनुतापनिवारणकारणं
निखिललोकमनोहरणे क्षमम्
विकचपुष्पपरागसुवासितं
ह्युपवनं पवनं वनमस्ति वा।।

भावार्थ

शरीर के ताप का निवारण करने वाला, समस्त लोक के मन को हरण करने में समर्थ खिले हुये पुष्पों के पराग से सुवासित यह या तो उपवन है या पवन है या फिर वन है।

सुधियः

शुचिसुवर्णसदुक्तिविभूषिताः
सकलभूतलमण्डलमण्डनाः
विविधरत्नचयं वसुधातले
वसुधिया सुधियो न नमन्ति वै।।

भावार्थ

सुन्दर एवं पवित्र वर्णों से युक्त सुभाषितों से विभूगित, समस्त भू मण्डल के लिये अलंकार के संमान सुधी जन (विद्वान् लोग) पृथ्वी पर नाना प्रकार के रत्नों के समूह को धन नहीं मानते वे तो सुभाषितों को ही रत्न मानते हैं।

यष्टिका

तमसि सञ्चरणेऽथ सरोवरा–
त्कमलपुष्पचये रिपुदर्शने।
उपकरोति जनानिह यष्टिका
विहरणे हरणे ह्यथवा रणे।।

भावार्थ

अन्धकार में भ्रमण करते समय अथवा सरोवर से कमल के पुष्प निकालते समय लाठी लोगों का बड़ा उपकार करती है चाहे विहरण हो, हरण हो या रण हो।

रविकृतम्

हरितधान्यमय नवशाद्वलं
प्रखरतापतयैव विशोषणैः
अनिशमन्नकणे परिवर्तितं
रविकृतं विकृतं च कृतं शुभम्।।

भावार्थ

हरे भरे धान्य से परिपूर्ण नवीन खेत को अपनी प्रखर तापमयी किरणों से सुखा डालने वाले रवि ने उस खेत को अन्न के कणों में परिवर्तित कर दिया अर्थात् फसल पका दी। सच है रविकृत विकृत भी शुभकृत है।

कंटकम्

धृता जनिः पुष्पकुलेऽपि नित्यं
धत्से न गन्धं न च पेशलत्वम्
पीडाकरस्तीक्ष्णमुखेन सद्यो
नमो नमस्ते खलु कंटकाय।।

भावार्थ

पुष्पों के कुल में जन्म लेने के बाद भी तुम न सुगन्ध धारण कर पाये और न तो कोमलता ही अपितु अपने तीखे मुख से (नोक से) तुरन्त ही पीडा और देते हो अरे कंटक ! तुम्हें बार बार नमस्कार है।

पादुके

तप्ते ग्रीष्मे कठिनकठिने पर्वते कानने वा
क्लिष्टे मार्गे ह्युपलविषमे, कुत्सिते कर्दमेऽपि
पादत्राणं विदधत इमे पादुके ! मानवानां
दुःखं लब्ध्वाप्यहह ! सुखदा वृत्तयः सज्जनानाम्।।

भावार्थ

तपती हुई ग्रीम ऋतु ें,अतिकठिन पर्वत या वनप्रान्तर ें, दुर्ग ऊँचे नीचे ार्ग ें या फिरं गन्दे कीचड़ ें भी ये दोनों चरण पादुकायें नुमयों के पैरों की रक्षा करती हैं। अहह ! सज्जनों का यही स्वभाव है कि वे दुःख भोग कर भी दूसरों को सुख ही देते हैं।

लेखनी

रम्योद्गारान् सरसवचसा वर्णयन्ती सुखेन
निन्दन्ती वा कलुषमशिवं निर्भयं भूतलस्थम्
निष्पक्षेयं कविकरधृता लेखनी सत्प्रियास्ते
एवंभूतो भवति भुवने सत्यनिष्ठस्तपस्वी।।

भावार्थ

हृदय के रम्य उद्गारों को सरस शब्दों से सुखपूर्वक वर्णन करती हुई और अशिव पाप की पृथ्वी पर निर्भय होकर निन्दा करती हुई कवि के हाथ की यह लेखनी निमपक्ष एवं सत् को प्रे करने वाली है। यथार्थत: पृथ्वी पर सत्यनिमठ तपस्वी ऐसे ही होते हैं।

मण्डूकः

एकस्मिन्क्षण एव वारिणि सखे ! त्वं लीयसे लीलया
शुष्के भूमितले च कूर्दनमदो धत्से द्वितीये क्षणे
चातुर्यैः सुविधानुसारमनिशं ते निर्णयो दृश्यते
हे मण्डूक ! भवादृशास्तु चतुरास्तिष्ठन्ति मोदान्विता:।।

भावार्थ

मित्र ! तुम एक ही क्षण में लीलापूर्वक पानी में विलीन हो जाते हो और दूसरे ही क्षण सूखी जमीन पर कूदने लगते हो। सुविधानुसार चतुराई से तुम सतत निर्णय करते हो हे मेंढक ! तुम्हारे जैसे चतुर लोग ही संसार में सुखी रहते हैं।

वृश्चिकः

कृष्णाङ्गेऽथ सिताङ्गकेऽपि निभृतं भीतिप्रदं यद्विषं
कौटिल्यं प्रतिपर्वणि प्रतिदिनं यत्ते तनौ संस्थितम्
मानुष्ये वसतौ तदेव सततं कृत्वा निवासं भुवि
किं भो ! वृश्चिक? दंशनं विषमयं सम्प्राप्तमेव त्वया।।

भावार्थ

चाहे काला शरीर हो चाहे गोरा तुम्हारे भीतर पर्याप्त भयानक विष भरा है, तुम्हारी गांठ–गांठ में कुटिलता पूरे देह में समाई है क्यों रे बिच्छू ! मनुष्यों की बस्ती में निरन्तर निवास करने के कारण ही तुमने यह विषैला दंश सीख लिया है क्या ?

मानवः

दृष्ट्वा ते रसनासहस्रमधुना लीना द्विजिह्वा बिले
भूगर्भेऽपि च वृश्चिकाः प्रविविशुः संवीक्ष्य ते दंशनम्
हिंसां ते तु विलोक्य हिंस्रपशवो याता वनं लज्जया
पाषाणे भुवि देवता परिणता धन्योऽसि हे मानव!।।

भावार्थ

तुम्हारी हजारों जिह्वाओं को देखकर बेचारे दो जीभ वाले साँप तो बिल में घुस गये और तुम्हारे भीषण दंश को देखकर बिच्छू भी भूमि के गर्भ में कहीं जा छुपे। तुम्हारी हिंसा को देख कर सारे हिंस्र पशु लज्जा के मारे वन में भाग गये और पृथ्वी पर देवता तुम्हें देखकर पत्थर हो गये हे मानव! तुम धन्य हो!

दूर्वा

उत्तुङ्गैर्द्रुमतल्लजैर्विहसितापीयं विनम्रा सती
नग्नत्वं वसुधातलस्य ललितैराच्छादयत्यङ्कुरैः
वर्षर्तौ शिशिरे च जीवति सदा ग्रीष्मेऽपि मोदैः समं
लोके कष्टशताकुलापि विनता दूर्वा सदा वर्द्धते।।

भावार्थ

ऊँचे ऊँचे वृक्षों के द्वारा जिसकी हँसी उड़ाई गई हैं फिर भी वह विनम्र भाव से अपने छोटे–छोटे सुन्दर अंकुरों से पृथ्वी की नग्नता को ढकने का प्रयास करती रहती है। वर्षा शिशिर या फिर ग्रीष्म सभी ऋतुओं में जो समोद जीवित रहती है वह सैकड़ों कष्टों से व्याकुल रहती हुई भी दूर्वा सदा बढ़ती ही रहती है।

नागदन्तः

भित्तौ निलीनमिदमस्ति तनोस्तवार्द्धं
शृंगे तथापि बहुवस्तु परिग्रहस्ते
यत्नैः कृतोऽपि भविता सकलं परस्मै
रे नागदन्त! भवतो विफलाः प्रयासाः।।

भावार्थ

तुम्हारी देह का आधा हिस्सा तो दीवाल में धँसा हुआ है फिर भी तुम अपने सिर पर जाने कितनी वस्तुओं का परिग्रह लादे हुये हो। तुम खूब यत्न करो परन्तु तुम्हारा सब संग्रह दूसरे लोग ही ले जायेंगे अरे खूँटी! तुम्हारा प्रयास विफल ही होगा।

शमीवृक्षकः

मूले स्कन्धतले भुजासु सततं शाखाप्रशाखासु वा
सर्वत्रैव धृतन्नु कंटकमयं यद्विप्रियं कञ्चुकम्
लोकोद्वेजनकर्मणा तव सखे! देहेऽग्निरुज्जृम्भते
भोग्यं कर्मफलं सदैव भुवने सर्वैः शमीवृक्षक!।।

भावार्थ

अरे शमीवृक्ष! तुमने तो जड़, स्कन्ध (तना) भुजायें, शाखा–प्रशाखायें सब पर कंटकों से भरा हुआ कुरता सा पहन रखा है। हे मित्र! इस कांटों के कुरते से संसार को तुम सदा उद्विग्न करते हो इसी से तो तुम्हारी देह में आग फूट पड़ती है। भाई दुनियाँ में कर्म का फल तो सभी को सदैव भोगना ही पड़ता है।

जलयन्त्रम्

स्वादूदकं निजमुखेन सदा ददासि
तृप्त्यै जना अपि नता रसमापिबन्ति
सौख्यप्रदोऽसि जलयन्त्र! नमोऽस्तु तुभ्यं
लोके सतां सदसि के न भवन्ति नम्राः।।

भावार्थ

भाई हैण्डपम्प ! तुम अपने मुख से सदा स्वादिष्ट शीतल जल देते रहते हो और लोग भी तृप्त होने के लिये सिर झुका कर रस पीते रहते हैं। आप तो सुखदाता हैं आपको नमस्कार है। सच है–संसार में सज्जनों की सभा में कौन है जो नम्र नहीं हो जाता

दुग्धम्

नित्यं वह्नितले निधाय परितः सन्ताप़यन्ति प्रजाः
शीतत्वे च विभेदयन्त्यविरतं तक्रप्रयोगैः सदा
भिन्नेऽथापि तनौ प्रमन्थनविधौ मथ्नन्ति दण्डैः खला–
स्तेभ्यः प्राणघृतं प्रदाय भुवने धन्योऽसि दुग्ध ! ध्रुवम्।।

भावार्थ

लोग रोज ही तुम्हें आग पर चढ़ा कर तपाते हैं, शीतल हो जाने पर मट्ठा डालकर तुम्हें फाड़ देते हैं, फट जाने पर भी वे दुष्ट मन्थन दण्ड (मथानी) डालकर तुम्हें मथित करते हैं परन्तु तुम फिर भी उन्हें अपने घृतरूप प्राण दे देते हो है दूध ! तुम निश्चय ही धन्य हो

दीपम्

स्वल्पं तैलधनं, मृदा च सुतनुर्लघ्वी पुनर्वर्तिका
तीक्ष्णा वह्निशिखा मुखेऽतितरला सत्कर्मयोगे स्थिता
घोरध्वान्तविनाशनेऽसि निरतो रात्रौ स्वशक्त्या सखे !
दीप ! त्वामनिशं नमोऽस्तु ; सुजना एवं भवन्ति क्षितौ।।

भावार्थ

थोड़ा सा तेल का धन, मिट्टी का शरीर, छोटी सी बत्ती, और तीखी आग की ज्वाला को मुख में रख कर सत्कर्म के योग में स्थित, हे मित्र दीपक ! घोर अन्धकार के विनाश में रात्रि में तुम यथा शक्ति लगे ही रहते हो तुम्हें बार–बार प्रणाम है। सज्जन ऐसे ही होते हैं।

ऐरावतः

लोकं नमन्ति विमदा भुवि ते हि पूज्या
लोके भवन्ति समदा न हि लोकवन्द्याः
लक्ष्मीसुरेन्द्रनृपभूषण ! वारणेन्द्र !
ऐरावत ! त्वमधुना समुपेक्षितोऽसि।।

भावार्थ

जो मदहीन होते हैं वे जगत् को प्रणाम करते हैं, वे पूज्य हैं। जगत् में मर्द वाले लोग वन्दनीय नहीं होते। लक्ष्मी–राजा–एवं इन्द्र के आभूषण हे ऐरावत गजश्रेष्ठ ! तुम समद हो इसीलिये आजकल तुम्हारी उपेक्षा हो रही है।

गजः

लक्ष्मीपूतपदाब्जकेसरकणक्लिन्ना त्वदीया तनुः
देवेन्द्रेण जनाधिपैश्च सततं सम्मानिताऽऽसीत्पुरा
सा निर्वाचनचिह्नके परिणता क्षुद्रैः सखे ! भोज्यते
दौर्भाग्येन कलौ गज ! त्वमधुना नूनं विपत्तिं गतः।।

भावार्थ

तुम्हारा शरीर महालक्ष्मी के पवित्र चरण कमल पराग के कणों से पवित्र रहता था, देवराज इन्द्र और राजागण निरन्तर तुम्हारा सम्मान करते थे तुम्हारी वही मूर्ति आज निर्वाचन चिह्न में

परिवर्तित हो जाने के कारण क्षुद्र उसे भोग रहे हैं अरे गज ! कलिकाल में तुम्हारा दुर्भाग्य है तुम अब निश्चय ही विपत्ति में पड़ गये हो।

माया

विद्वेषो द्विजसन्ततौ, पिशुनता लोकेऽत्र सत्सु स्वयं
प्रीतिर्दुष्टजनप्रसादनविधौ यस्यामतिर्विग्रहे
नीतिर्भीतिकरी प्रमादलहरी मायायुता मायिषु
सेयं क्षोभकरी कलौ तव विभो ! मायानटी वर्द्धते।।

भावार्थ

हे प्रभु ! द्विज सन्तान मात्र से घोर विद्वेष, संसार भर में सज्जनों की चुगली पर–निन्दा, दुष्ट जनों की प्रसन्नता के लिये ही प्रेम करने वाली जिसकी नीति भी भय देने वाली है जो साक्षात् प्रमाद की लहर है तथा मायाविदों के लिये भी माया से युक्त है वही यह क्षोभ बढ़ाने वाली तुम्हारी माया नटी दिनरात बढ़ रही है।

संकेतक!

रक्तेक्षणेन गतिरोधमदः करोषि
यान्ति द्रुतं खलु जना हरितेक्षणेन
पीतेक्षणेन च भवन्ति सुसावधानाः
संकेतक ! त्वमधुनासि जगन्नियन्ता।।

भावार्थ

लाल आँख दिखाकर तुम लोगों की गति रोक देते हो और हरी आँख देखते ही लोग तेजी से चलने लगते हैं। पीली आँख से लोग सावधान हो जाते है अरे! सिग्नल! अब तो तुम ही जगत् के नियन्ता हो।

पादयामः

रज्जुं निधाय निजकण्ठतलेऽपि नित्यं
लज्जानिवारणविधौ मम ते प्रयासः
द्वैतं बहिर्न हृदयेऽसि सदैकनिष्ठः
हे पादयाम! भवतेऽस्तु नमो मदीयम्।।

भावार्थ

अपने गले में रस्सी बांधकर (नाड़ा डालकर) भी तुम मेरी लज्जा को ढकने के लिये निरन्तर प्रयास करते हो। तुम्हारे बाहर तो द्वैत है (दो पाँयचे हैं) पर हृदय में तुम एकनिष्ठ (अद्वैतवादी) हो हे पायजामे! तुम्हें मेरा नमस्कार है।

चन्द्रलेखा

धौता गाङ्गैर्जलौघैः सुरसदनगतै रक्षिता नागवर्य्यैः
पुष्टा पीयूषवर्षैः सकलसुरगणैर्मूर्ध्नि धत्ताप्युमेशैः
कार्श्यं भाःपाण्डरत्वं त्यजति न च तनोश्चन्द्रलेखा वराकी
कः शक्तो भाग्यरेखाविलयनकरणे भूतलेऽस्मिन् जनानाम्॥

भावार्थ

देवलोक में अवस्थित गंगा के जल से धोई गई और नागों के द्वारा रक्षिता, समस्त देव गणों के द्वारा अमृतवर्षा कर के पुष्ट की गई और शिव जी के द्वारा सिर पर धारण की हुई भी, बेचारी चन्द्रलेखा यदि अपनी कृशता और पीली कान्ति को नहीं छोड़ पाती तो इस पृथ्वी पर भाग्य की रेखाओं को मिटाने में कौन समर्थ है? अर्थात् कोई नहीं।

श्मशानम्

निःस्वोऽस्तु वा धनपतिः सबलोऽबलो वा
दातास्तु वातिकृपणो, नृपतिर्नरो वा
सर्वे तवाङ्कशयने सुखिनः स्वपन्ति
धन्यः श्मशान! भुवने तव साम्यवादः॥

भावार्थ

निर्धन हो किं वा धनाधिप, सबल हो या फिर निर्बल, दानी हो या अतिकृपण राजा हो या मानव तुम्हारी गोद में तो सभी सुख से सोते हैं हे श्मशान! पृथ्वी पर तुम्हारा साम्यवाद धन्य है।

ताम्बूलम्

दन्तैर्विचूर्ण्य भवतः सकलं शरीरं
मोदन्त एव मनुजा भुवि रक्तजिह्वाः
तेषां मुखेषु रुचिरां सुरभिं तनोषि
ताम्बूल तेऽद्भुततमः सरलः स्वभावः।।

भावार्थ

दाँतों से आपके सारे शरीर को चूर्ण चूर्ण करके लाल लाल जीभ वाले मनुष्य बड़े प्रसन्न होते हैं परन्तु आप उनके मुख में रुचिर सुगन्ध ही भर देते हैं हे ताम्बूल! आपका सरल स्वभाव अद्भुततम है।